इमाम रिज़ा अलैहिस्सलाम

प्रोफ़ेसर अल्लामा अली मुहम्मद नक़वी साहब क़िब्ला
अनुवादकः मोहतरमा बिन्ते ज़हरा नक़वी "नदल हिन्दी" साहेबा

मामून की सियासत का तजज़िया
इमाम रिज़ा[अ०] और उनका तरीक़-ए-कार

अइम्म-ए-इतरत चूँकि दुनिया के हर हिस्से और हर ज़माने के लिए नमूना हैं। इसलिए ख़ुदावन्देआलम ने उन्हें हर तरह के हालात से दोचार रखा ताकि हर हालत में उनका किरदार, तरीक़-ए-कार और हिक्मते अमली आने वाली नस्लों के लिए एक नमूना रहे। इसलिए इस ताबनाक सिलसिल-ए-इस्मत की हर फ़र्द ख़ास तरह के मुख़तलिफ़ हालात से दोचार रहे और उन्होंने मुख़तलिफ़ क़िस्म के हालात में हक़ और हक़ीक़त की हिफ़ाज़त और "पैग़ाम" की तबलीग़ के लिए मख़सूस हिक्मते अमली को चुना। अइम्मा की हिक्मते अमली को समझने और अपने लिये उनसे रहनुमाई हासिल करने के लिए हमें चाहिए कि दुश्मन के हालात, तरीक़े और हिक्मते अमली के मुक़ाबले में अपने अइम्मा की हिक्मते अमली का तजज़िया करें।

अइम्म-ए-इसमत के दरमियान जिन हालात से इमाम रिज़ा[अ०] दोचार रहे वह सख़्त क़ाबिले ग़ौर हैं क्योंकि एक तरफ़ "मक्र" बातिल है और दूसरी तरफ़ "मक्कारी का जवाब"।

मामून की चाल

मामून इमाम रिज़ा[अ०] को जो "इस्लामी तहरीक" के अलमबरदार हैं अपना वली अहद क्यों नामज़द करता है और ये हुक्म जारी करता है कि अब्बासी ख़िलाफ़त के तमाम ख़तीब इमाम रिज़ा के नाम का ख़ुतबा पढ़ा करें? मामून इमाम रिज़ा[अ०] को क्यों मदीने से बुलवाकर अपनी जानशीनी की पेशकश करता है और क्यों उन्हें मजबूर करता है कि वह उसे क़ुबूल करें।

पहला नुकता जो हम इस इक़्दाम से समझ सकते हैं वह इमाम[अ०] के असरात और उनके इज्तेमाअी सियासी किरदार की अहमियत है। क्योंकि मामून जो दुनिया का एक साहेबे इक़्तेदार बादशाह था। जब तक इमाम[अ०] के सियासी इज्तेमाअी और जंगी तवानाई के वज़्न को समझ न लेता इमाम[अ०] के आगे जिनको वह अपने निज़ाम का दुश्मन समझता था हथियार नहीं डाल सकता था। नामुमकिन था कि मामून एक गोशा नशीन फ़र्द को जो सियासत से बेताल्लुक़ अकेले मदीने की गली के एक घर के किसी गोशे में या मस्जिदे नबवी में वाज़ या रूहानी व मानवी फ़राएज़ को अन्जाम देने लगे हों मदीने से राजधानी में बुलवाये और उसे अपने निज़ामे ख़िलाफ़त का दुश्मन गिनते हुए उसके आगे हथियार डाल दे। हमको ये देखना है कि इस अमल से मामून की नियत क्या थी?

उस ज़माने के सरकारी तारीख़ लिखने वालों ने ये ज़ाहिर करने की कोशिश की है कि मामून का ये काम हक़ परस्ती और इन्साफ का नतीजा था। जैसे तबरी लिखता है कि "इमाम रिज़ा[अ०] की जानशीनी के एलान से मामून का इरादा ये था कि- मामून ने देखा कि बनी अब्बास और औलादे अली में इमाम रिज़ा[अ०] से बढ़कर मुत्तक़ी और इल्म वाला कोई नहीं है। याक़ूबी और इब्ने असीर इसी नज़रिये की तकरार करते हैं।

(इब्ने असीर, अलकामिल, जि-1, पेज-111/याक़ूबी, जि-3, पे-176)

अस्फ़हानी भी यही ज़ाहिर करना चाहते हैं कि मामून सच्ची नियत ये ख़िलाफ़त का ओहदा इमाम रिज़ा[अ०] के नाम मुन्तक़िल करना चाहता था। वह लिखते हैं मामून के साथ अमीन की ख़ूँन भरी जंग के दौरान मामून ने अहद किया था कि अगर वह जीतेगा तो

ख़िलाफ़त को औलादे अली[अ०] की सबसे अफ़ज़ल फ़र्द के नाम मुन्तक़िल कर देगा और चूँकि इमाम रिज़ा[अ०] सबसे अफ़ज़ल थे इसलिए मामून ने ख़िलाफ़त उनकी तरफ़ मुन्तक़िल करने की कोशिश की।

मगर हक़ीक़त ये है कि कुल्ली मक़ासिद और आम फ़ायदे के लेहाज़ से मामून में और दूसरे ख़ुलफ़ा में कोई फ़र्क़ नहीं था। वह हवस का बन्दा और साहेबे क़ुव्वत और सरवत था और उसका आख़री मक़सद ज़ाती इक़्तेदार का इस्तेहकाम था और इस मामले में उसने अपने भाई के क़त्ल से भी गुरेज़ न किया।

इमाम रिज़ा[अ०] को अपना जानशीन और ख़लीफ़ा नामज़द करना भी अपने इक़्तेदार की मज़बूती और अपने दुश्मनों को कमज़ोर करने की एक हिक्मते अमली थी। शिया मुफ़क्किरीन ने हमेशा इस बात को मानने से इन्कार किया है कि मामून का ये फैसला सिद्क़े नियत पर मबनी था और ये वाज़ेह किया है कि मामून का एक इक़दाम सिर्फ़ सियासी मसलेहत की बुनियाद पर था। और तारीख़ लिखने वालों का वह गिरोह जो मामून के इस फैसल को एक सच्चा फ़ैसला ज़ाहिर करता है, उसका मक़सद मामून को इन्साफ़ पसन्द और हक़ दोस्त ज़ाहिर करना है। और उनकी कोशिश मामून के मन्सूबे के ऐन मुताबिक़ है। मक़ासिद के एतेबार से मामून और दीगर ख़ुलफ़ा में कोई फ़र्क़ न था। सब इक़्तेदार के दीवाने थे। मगर दो बातों में वह अपने पिछले ख़लीफ़ाओं से अलग था।

पहले ये कि मामून दूसरे सभी ख़लीफ़ाओं के मुक़ाबले में बहुत ज़्यादा चालाक था और इस लेहाज़ से उसे अब्बासी मुआविया कहा जा सकता है। जिस तरह मुआविया हुकूमत के लिए ताक़त को सियासत से मिला दिया था, उसी तरह मामून भी ताक़त के साथ सियासत को इस्तेमाल करने के फ़न में माहिर था। वह उससे कहीं ज़्यादा चालाक था कि ताक़त को इक़्तेदार की मज़बूती का अकेला रास्ता समझता। बल्कि हिक्मते अमली, सियासत और नये सियासी तर्ज़े अमल अपनाने की तरफ़ भी उसका रुख़ था। इसी तरीक़े से उसने अशराफ़े अरब और अब्बासियों की मुख़ालेफ़त और अमीन का छोटा भाई होने के बावजूद, अमीन को मैदान से निकाल बाहर किया और ख़ुद ख़िलाफ़त पर क़ब्ज़ा कर लिया। दूसरी बात ये थी कि मामून दूसरे उमवी और अब्बासी ख़लीफ़ाओं के मुक़ाबले में निस्बतन इल्मी फ़िक्र और सक़ाफ़ती ज़ौक़ रखता था और अपना ज़ाहिर ऐसे बनाये रखता था जैसे वह दोस्तदारे इल्म व फ़ज़ीलत और हक़ व इन्साफ़ का तरफ़दार है। फ़ख़्री इस बारे में लिखते हैं: ''मामून दूसरे अब्बासी ख़लीफ़ाओं से ज़्यादा चालाक था।'' सुयूती कहते हैं: ''मामून की चालाकी, इल्म और सियासत ये वह अहम बातें थीं जो हुकूमत में उसकी क़ुव्वत और फ़रेब की आमेज़िश का सबब बनीं।

मामून का मक़सद

''क़ुदरत'' को ''इक़्तेदार'' में बदलना और ''हाकिमियत'' को शरअ बनाना

मामून जो दूसरे ख़लीफ़ाओं के मुक़ाबले में ज़्यादा चालाक था ये नुक़्ता समझ चुका था कि ''क़ुदरत'' और ''इक़्तेदार'' और ''शरई हुकूमत'' और ''ग़ैरशरई हुकूमत'' में क्या फ़र्क़ है और वह ये भी जानता था कि अगर ''हुकूमत'' अवाम की नज़रों में ''शरीअत'' से महरूम हो तो हमेशा ख़तरों में घिरी रहती है।

अब्बासियों ने उमवियों से जंग के दौरान अपनी तहरीक की मशरूइयत को पैग़म्बर[स०] व आले पैग़म्बर[अ०] से इन्तेसाब के ज़रिये हासिल किया था और हुसैन[अ०] के ख़ून का बदला लेने के नाम पर अपनी उमवी मुख़ालिफ़ तहरीक को हक़दार यानी आले मुहम्मद[अ०] के हवाले कर देंगे, मगर उमवी हुकूमत के ज़वाल के बाद हुकूमत की बागडोर ख़ुद ही संभाल ली और पिछले नारे भूल गये। इसी वजह से इराक़, ख़ुरासान और ईरान के अवाम की निगाहों में जो आले मुहम्मद[अ०] और अइम्म-ए-अहलेबैत की तरफ़ झुकाव रखते थे, उनको क़ानूनी हैसियत हासिल न थी और उमवियों की तरह शुमार किये जाने लगे।

मामून की ग़ालिबन ये चाहत थी कि इमाम रिज़ा[अ०] की वलीअहदी का जाल फैलाकर ''क़ुदरत'' को

"इक़्तेदार" में तबदील करे और "हाकिमियत" को अवाम की नज़र में "जायज़" बना दे। वह इमाम रिज़ा[अ०] को अपने समाजी और सियासी निज़ाम की तौजीह का ज़रिया बनाना चाहता था। लेकिन इमामत ने अपने नपे तुले और इलाही अमल और हिक्मत के ज़रिये इस मन्सूबे पर पानी फेर दिया और वली अहदी को तौजीह निज़ाम का वसीला बनने के बजाए उसी निज़ाम को कुचल डालने के असलहे में बदल दिया।

दूसरा मक़सद
अवाम की नज़रों में हुकूमत की साख को बदलना

मामून अपने इस इक़्दाम के ज़रिये ख़िलाफ़ती निज़ाम की साख को अवाम की नज़र में बदलना चाहता था। उमवियों के ज़माने से ख़ास कर यज़ीद के ज़माने से हुकूमत में एक अजीब हैवानियत और दरिन्दगी की कैफ़ियत पैदा हो गयी थी। अब्बासियों के हुकूमत में आने के बाद सफ़्फ़ाह, मन्सूर और हारून की ख़ूनी जंग और दरिन्दगी इस हालत के बाक़ी रहने की वजह हुई, इस पर अमीन व मामून की आपसी जंग इस साख को बदलने में कोई मदद न की।

मामून चूँकि चालाकी के लेहाज़ से सभी पिछले ख़लीफ़ाओं से अलग था इसलिए वह चाहता था कि हुकूमत के बारे में इस आम असर को बदल दे। इसी मक़सद को पूरा करने के लिए एक तरफ़ तो उसने ख़ुद को इल्म दोस्त ज़ाहिर करने की कोशिश की और दूसरी तरफ़ ख़ुद को हक़ व फ़ज़ीलत का तरफ़दार साबित करना चाहा। चुनानचे अपने पहले मक़सद को पूरा करने के लिए उसने पिछले इल्मी माख़ज़ की इशाअत और हकीमों और फ़लसफ़ियों की किताबों के तर्जुमों, इल्मी मुनाज़रों और फ़लसफ़ियाना मजलिसों का सिलसिला शुरु किया। और दूसरे मक़सद की तकमील के लिए अहलेबैत की फ़ज़ीलतों का इक़रार करना ख़ासकर अमीरुलमोमिनीन[अ०] के मरतबे का एतेराफ़, सादात का एहतेराम और इमाम रिज़ा की जानशीनी का एलान किया ताकि उसे हक़ पसन्द समझा जाने लगे। ये दोनो तरीक़े मामून की एक ही पॉलीसी के दो पहलू हैं जिनका मक़सद हुकूमत के लिए अवामी जवाज़ पैदा करना और हुकूमती निज़ाम की साख को बदलना था।

तीसरा मक़सद
उभरती हुई शिया तहरीक को दबाना

उस दौर में शीईयत एक अवामी इन्क़ेलाबी क़ुव्वत की सूरत में उभर आयी थी और शिया, निज़ामे हाकिम के ख़िलाफ़ हिज़्बे मुख़ालिफ़ की शक्ल में उभर रहे थे। दुनिया इस्लाम के गोशे-गोशे में ख़ासकर ख़ुरासान में इन्क़ेलाब का ज्वालामुखी तैयार था और लावा फूटने ही वाला था। मामून इमाम रिज़ा की जानशीनी के एलान से ज्वालामुखी को ठण्डा करना और तहरीक में फूट डालना चाहता था और तहरीक की राह में रुकावट पैदा करना चाहता था। मगर इमाम रिज़ा[अ०] की हिकमत अमली ने तहरीक को और ज़्यादा फैला दिया।

शिया अरबी लेखक हाशिम मारूफ इस नुक्ते की तरफ ग़ौर करते हुए लिखता है कि: "जब मामून ने देखा कि शिया फैलते चले जा रहे हैं, यहाँ तक कि उसके अरकाने दौलत में भी शिया अइम्मा और शीईयत की तरफ झुकाव पाया जाने लगा है, तो उसने इसे रोकना चाहा। चुनानचे इमाम रिज़ा[अ०] की जानशीनी का एलान शिया तहरीक को फैलने से रोकने की एक चाल थी। एक तरफ वह तहरीक की आग के ठण्डा होने का इन्तिज़ार कर रहा था, दूसरी तरफ़ इन्क़ेलाबियों के रहबर को राजधानी में अपने आदमियों की निगरानी में रखना चाहता था।

132 हि० से यानी जब से अब्बासी इक़्तेदार में आये शीआी इन्क़ेलाबात का एक सिलसिला सा क़ायम हो गया यहाँ तक कि कुछ वज़ीर भी शीआी ख़ायालात रखते थे और ख़िलाफ़त को बनी फ़ातिमा की तरफ़ मुन्तक़िल कर देना चाहते थे (अबी सलमा इनहेलाल ने अबी अब्बास सफ़्फ़ाह के दौर में और याक़ूब बिन दाऊद ने अल-महदी के दौर में ऐसी ही कोशिश की) अमीन और मामून के दौर में भी बड़ी-बड़ी शिया तहरीकें सामने आयीं। मुहम्मद बिन इब्राहीम और अबिस्सराया के

इन्क़ेलाबात या मुहम्मद दीबाज बिन इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] का क़याम ऐसा ही है। असल में शिया तहरीकें और इन्क़ेलाबात मामून की हुकूमत के इब्तेदाई दिनों में अपनी उठान पर पहुँच चुके थे। उस दौर में हर दौर से ज़्यादा शियों की कोशिशें बड़े इन्क़ेलाब की शक्ल इख़्तियार कर गयी थीं। यहाँ तक कि कहा जाता है कि मामून की लश्कर का कमाण्डर ताहिर बिन हसन ख़ुद शीअी ख़यालों वाला था।

इमाम रिज़ा[अ०] की जानशीनी से मामून ये चाहता था कि इस बहाने से शियों को जिन्होंने एक मुख़ालिफ़ टुक्ड़ी की शक्ल में जंग का नक़्शा बना रखा है उनको मोर्चों से बाहर खींच कर जंग का ख़ात्मा कर दे। वह चाहता था कि इमाम[अ०] के इन्क़ेलाबी मक़ाम व मन्ज़िलत पर गहरी चोट लगाये और शियों की इमकानी (Potential) इन्क़ेलाबी ताक़त को दबा दे। इस ज़माने तक शिया हमेशा एक मुख़ालिफ़ क़ुव्वत और महाज़ी उन्सुर समझे जाते थे जो पहाड़ों और गुफ़ाओं में मोर्चाबन्दी करते थे। मामून इमाम रिज़ा[अ०] को जानशीनी क़ुबूल करने पर इस लिए मजबूर कर रहा था, वह चाहता था कि इस मौक़े से फ़ायदा उठाते हुए शिया मुबारज़ा पर एक चोट लगाये जिसने हुकूमत से पल भर का चैन भी छीन लिया था। मगर इमाम रिज़ा[अ०] ने अपनी रहबरी की ख़ुदादाद इस्तेदाद की बुनियाद पर उसके मन्सूबे को नाकाम बना दिया और इस मौक़े से फ़ायदा उठाकर तहरीक को और फैला दिया यहाँ तक कि मामून इमाम[अ०] को शहीद कर देने पर मजबूर हो गया।

चौथा मक़सद

इमाम की शख़्सियत को कमज़ोर करना

हुकूमत का मक़सद इमाम की इन्क़ेलाबी शख़्सियत पर चोट लगाना था। इमाम[अ०] की शख़्सियत को कमज़ोर करने के लिए मामून ने दूसरे तरीक़े भी आज़माये जैसे इल्मे कलाम के माहिरों के साथ इमाम[अ०] के मुनाज़रे कराना ताकि इमाम हार जायें और उनकी इल्मी बुलन्दी ख़त्म हो जाए, लेकिन हर मुनाज़रे में इमाम की शख़्सियत और ज़्यादा आबोताब के साथ सामने आयी।

पाँचवां मक़सद

दाख़िली दुश्मनों के ख़िलाफ़ इक़्तेदार की जंग में शिया ताक़त का इस्तेमाल

ये बात साफ़ ज़ाहिर होती है कि इमाम रिज़ा की जानशीनी के एलान से मामून एक तीर से दो शिकार करना चाहता था। एक तरफ़ शियों के इन्क़ेलाबी रुजहानात को क़ाबू में रखना और दूसरी तरफ़ उस अज़ीम क़ुव्वत को अपने फ़ायदे में इस्तेमाल करना। अभी तक मामून के इक़्तेदार की जड़ें मज़बूत नहीं हुईं थीं और अरब अमाएदीन मामून के मुक़ाबले में अमीन के तरफ़दार थे और मामून इक़्तेदार के मरकज़ को अरब अमाएदीन की तरफ़ से अहले ख़ुरासान की तरफ़ मुन्तक़िल कर देने की कोशिश में था। अहलेबैत से ज़ाहिरी रिफ़ाक़त सिर्फ़ इस ख़याल से थी कि शायद इस तरह अहले ईरान उसके हामी हो जाएं। इमाम रिज़ा की जानशीनी के एलान से इन्क़ेलाबी शियों की अज़ीम क़ुव्वत को वह अपने मफ़ाद में इस्तेमाल करना चाहता था। और अहले ख़ुरासान की हिमायत भी हासिल करना चाहता था जो ज़्यादातर शीअी रुजहानात रखते थे और जिनकी मदद से अपने दाख़िली दुश्मनों को शिकस्त दी थी। अरब के अवाम चूँकि अमीन के तरफ़दार थे इसलिए उसके पास इसके अलावा कोई चारा न था कि वह फ़ारस और ख़ुरासान के अवाम पर भरोसा करे।

छठा मक़सद

ख़ुरासान के अवाम की ख़ुशनूदी हासिल करना

मामून का एक और मक़सद इमाम रिज़ा की जानशीनी के एलान से ख़ुरासान वालों की ख़ुशनूदी हासिल करना था, यहाँ तक कि अमीन की शिकस्त के बाद भी वह अपने इक़्तेदार की हिफ़ाज़त के सिलसिले में ख़ुरासान वालों ही पर भरोसा करता था। उसकी माँ जिसका नाम मराजिल था ख़ुद भी ख़ुरासान ही की रहने वाली थी। अमीन और मामून की जंग हक़ीक़त में अरब और फ़ारस व ख़ुरासान वालों की जंग थी। मामून का वज़ीर फ़ज़ल बिन सहल ईरानी था और अमीन का

वज़ीर फ़ज़ल बिन रबी अरब था। इक़्तेदार बचाने के लिए मजबूरन मामून ज़्यादा तर ईरानियों और खुरासानियों पर भरोसा करता था। चूँकि अक्सर खुरासानी शीआी रुजहानात रखते थे, इस वजह से उनकी हिमायत हासिल करने के लिए मामून मजबूरन खुद को अहलेबैत का दोस्त ज़ाहिर करता था।

इमाम रिज़ा की शहादत

मामून के तरीक़-ए-कार की शिकस्त का मुज़ाहेरा

इमाम रिज़ा की जानशीनी के सिलसिले में मामून के इक़दाम, अब्बासी नमक ख़्वार मोर्रिख़ीन के नज़रिये के ख़िलाफ़, मुख़लिसाना न थे बल्कि ये इक़दाम क़तई सियासी और दिखावे के थे, मगर इमाम ने खुदादाद हिक्मते अमली के ज़रिये मामून के नक़शे को पानी पर लकीर बनाने जैसा बना दिया।

इमाम ने मुख़्तलिफ़ तरीक़े और इज़हारे कराहत के ज़रिये मामून को उसके मक़सद में कामयाब न होने दिया बल्कि जानशीनी के एलान से फ़ायदा उठाते हुए इस्लाम के सच्चे पैग़ाम, शीईयत की तबलीग़, हुकूमत और मौजूदा निज़ाम को मज़मूम साबित करने का काम किया। इमाम के इसी अज़ीम कारनामे ने मामून और हुकूमत को इस दर्जा ख़ौफ़ज़दा कर दिया कि आख़िरकार घबराहट के आलम में मामून ने उन्हें ज़हर दिलवाकर शहीद करवा दिया।

इमाम रिज़ा की शहादत इस बात की दलील है कि उनकी हिक्मत अमली के मुक़ाबले में मामून की चाल मात खा गयी। ख़लीफ़ा ने इमाम को ज़हर देकर अपनी कमज़ोरी और बेचारगी का एतेराफ़ किया है।

इमाम रिज़ा[अ०] की हिकमते अमली

मामून और उसकी ख़िलाफ़त के काम करने के तरीक़े के मुक़ाबले में इमाम की हिकमते अमली क्या थी? इमाम रिज़ा की हिकमते अमली बिल्कुल नयी, बेहद हस्सास और बहुत ज़्यादा क़ाबिले ग़ौर है क्योंकि इससे पहले शिया अइम्मा मुबारज़ा को बढ़ाने की ग़र्ज़ से हमेशा राजधानी से दूर रहते थे मगर इमाम रिज़ा ने मजबूरन वली अहदी क़ुबूल की और राजधानी में रहकर मुबारज़ा को आगे बढ़ाया।

इमाम रिज़ा की हिकमते अमली बेहद हस्सास है क्योंकि इन्क़ेलाबी साख को बरक़रार रखने के लिए राजधानी से दूर रहना वली अहदी क़ुबूल कर लेने से ज़्यादा आसान था, लेकिन इमाम रिज़ा ने तहरीक को आगे बढ़ाने के लिए वली अहदी ज़रिये और वसीले के तौर पर इस्तेमाल किया।

ये हिकमते अमली बेहद क़ाबिले तवज्जह है क्योंकि हक़ और बातिल की कशमकश में मुख़्तलिफ़ तरीक़ेकार इस्तेमाल हुआ करते हैं। कभी इमामे हसन[अ०] की तरह सुलह जोई से काम लिया गया, कभी इमाम हुसैन[अ०] की तरह नबर्द आज़मायी की गयी, कभी हज़रत ज़ैनब[अ०] की तरह ख़िताबत से काम लिया गया, कभी सै० सज्जाद[अ०] की तरह दुआओं को बतौर हाथियार इस्तेमाल किया गया, इमाम मुहम्मद बाक़िर और इमाम जाफ़र सादिक़ की तरह मआरिफ़ व नज़रियाते इस्लाम को मुन्तशिर किया गया कभी इमाम मूसा काज़िम[अ०] की तरह सऊबते क़ैद बर्दाश्त की गयी और कभी मसनदे वली अहदी ख़िलाफ़त पर जलवा फ़रमाकर तहरीक के सच्चे रहबरों की मदद की गयी।

इमाम रिज़ा[अ०] की हिकमते अमली इस वजह से भी बेहद क़ाबिले ग़ौर है कि इससे हमें ये मालूम होता है कि एक खुदायी रहबर किस तरह बदतरीन हालात में अपनी ख़्वाहिश के ख़िलाफ़ जबरिया वली अहदी क़ुबूल करके बवुजूहे अहसन इस वली अहदी से तहरीक के लिए फ़ायदा हासिल करता है।

इमाम रिज़ा[अ०] ने इस क़िस्म की हिकमते अमली का इन्तेख़ाब क्यों किया? उसे जानने के लिए हमें चाहिये कि हम इस ज़माने के इस्लामी समाज पर नज़र डालें पैग़म्बरे इस्लाम[स०] के बाद ''मेयार'', ''मिक़दार'' पर क़ुर्बान हो चुका था। इस्लाम तेज़ी के साथ ऐशिया, अफ़्रीक़ा और यूरोप में फैला था। लाखों लाख अफ़राद मुसलमान हो गये थे मगर उनमें ज़्यादती ऐसे लोगों की थी जो नाम के लिए तो मुसलमान ज़रूर हो गये थे मगर रसमन वह दौरे जाहिलियत के अक़ाएद और तहज़ीब के पाबन्द थे। अगर किसी हद तक इस्लाम से आशना भी

थे तो ये वह इस्लाम था जो उन्हें दरबारे ख़िलाफ़त से मिला था। हेजाज़, कूफ़ा, बसरा और यमन के लोग किसी हद तक इस्लाम से वाक़फ़ियत रखते थे। इसी वजह से शीअी तहरीकों की शुरुआत इन ही इलाक़ों से हुई थी। मगर तुर्किस्तान, मावराउन्नहर, रूम, अफ़्रीक़ा, यूरोप (उन्दुलुस) और सिंध वग़ैरा के अवाम इस्लाम की सही तालीम, अइम्मा की मन्ज़िलत और शीअी तहरीक से तक़रीबन अन्जान थे। यही वजह है कि अक्सर अब्बासी ख़लफ़ाओं ने शिया तहरीक को तातारियों, तुर्कों और रोमियों की मदद से कुचला है।

निस्बतन मुन्सिफ़ और मोमिन दानिशमन्द जो दुनियाए इस्लाम के मरकज़ी ख़ित्ते (हिजाज़, बग़दाद, दमिश्क़) के रहने वाले थे हुकूमत के मुख़ालिफ़ थे, और अइम्म-ए-अहलेबैत की तरफ़ रुजहान रखते थे (यहाँ तक कि अइम्मा-ए-अहलेसुन्नत यानी अबूहनीफ़ा, शाफ़ई और मालिक ने भी हुकूमत के कारिन्दों के हाथों दुर्रे खाये और क़ैद की सख़्तियाँ झेलीं) और हुकूमत ने कुछ दरबारी उलमा पाल रखेथे जिनका काम मौजूदा निज़ामे हुकूमत की तौज़ीह पेश करना था। जो इस्लाम तुर्किस्तान और तफ़्क़ाज़ के लोगों तक पहुँचा था वह फेलतोरियों के ज़रिये पहुँचा था।

वाक़िफ़कार उलमा और अवाम तो अइम्मा को रूहानी और हक़ीक़ी पेश्वा की हैसियत से और हुकूमत को ग़ैर शरअी समझते थे लेकिन नावाक़िफ़ और दूर दराज़ इलाक़ों में बसने वाले लोग हुकूमत की क़दग़न और ग़लत प्रोपेगण्डों की वजह से अइम्मा की पहचान नहीं रखते थे। सिर्फ़ हेजाज़, मदीना और कुछ इराक़ व ईरान के महदूद इलाकों में पैग़म्बर और अहलेबैत की याद दिलों में बाक़ी रह गयी थी। उलमा के दरमियान इमाम मुहम्मद बाक़िर[अ०] और इमाम सादिक़[अ०] का ज़िक्र नुमायाँ तौर पर होता था। बक़िया अवाम यानी बल्ख़ से लेकर उन्दुलुस तक के रहने वाले हुकूमत की अफ़वाहों और रेशा दवानियों की वजह से इस हक़ीक़त से अन्जान थे कि रसूल[स०] के घराने पर क्या गुज़र रही है। ख़ास कर इमाम मूसा काज़िम[अ०] के ज़माने में जो ख़लीफ़ा की क़ैद में थे, रसूल[स०] के घराने और अवाम के दरमियान राब्ता बहुत दुश्वार हो गया था।

इन ही हालात में इमाम रिज़ा[अ०] ने इमामत की ज़िम्मेदारियाँ संभालीं और मामून ने उन्हें वली अहदी की पेशकश की और उन्हें उसे क़ुबूल करने पर मजबूर किया। ऐसी हालत में अगर हुकूमत के जब्रो तशद्दुद की बावजूद इमाम ये इरादा कर लेते कि वह इस पेशकश को ठुकरा देंगे तो ज़्यादा से ज़्यादा वह शहीद हो जाते जो अली[अ०] और हुसैन[अ०] के वारिसों के लिए फ़ख़्र की बात थी इसके अलावा और कुछ न होता, ताहम न चाहते हुए इस पेशकश को मन्ज़ूर कर दिया ताकि इसी ज़रिये से इमामों के नाम और शीअीयत का पैग़ाम आलमे इस्लाम के गोशे-गोशे में पहुँचा दें। इमाम चाहते थे कि हुकूमत की ज़रूरत को "बुर्जे फ़रियाद" के तौर पर तशैय्युअ़ की नक़ाबत का ज़रिया बना लें और उसी मक़ाम से शीअीयत की आवाज़ दुनिया के कानों तक पहुँचा दें।

इमाम हुसैन[अ०] ने अपने ख़ून, हज़रत ज़ैनब ने अपनी ख़िताबत और सै० सज्जाद ने अपनी दुआओं से शीअी तहरीक को इस हद तक मुहकम बना दिया था कि अब इसके वजूद के लिए कोई ख़तरा न था और इमाम मुहम्मद बाक़िर[अ०] और इमाम जाफ़र सादिक़[अ०] ने शीअी मआरिफ को मकतब की शक्ल में मुदव्वन कर दिया था। इस वजह से वली अहदी की पेशकश को क़ुबूल कर लेने से शीअी मसलक की ग़लत तफ़सीर का कोई एहतेमाल बाक़ी न रहा चुनानचे इमाम रिज़ा ने अपनी इस अमल के ज़रिये इस तहरीक को फैलाने की कोशिशें शुरु कर दीं।

इमाम रिज़ा[अ०] की वली अहदी की बुनियाद पर पहली बार इस्लामी दुनिया की तमाम मस्जिदों में एक ख़ुदाई रहबर और इमाम अहलेबैत का पैग़ाम ख़ुतबे में शामिल हुआ और पहली बार दुनियाए इस्लाम के रहने वालों को इस हक़ीक़त का इल्म हुआ कि पैग़म्बर के ख़ानदान की मुमताज़ हस्तियाँ अभी मौजूद हैं और इस दर्जा फ़ज़ीलत की मालिक हैं कि ख़लीफ़ तक उन्हें आलमे इस्लाम की रहबरी के लिए लायक़ तरीन फ़र्द मान लेने पर मजबूर हैं। इमाम रिज़ा ने शीअीयत को

हुकूमत के मुक़ाबले में एक अज़ीम सियासी कुव्वत की शक्ल बख़्शी। इमाम रिज़ा के लिए वली अहदी दुनिया के कानों तक उनका पैग़ाम और हक़ की आवाज़ पहुँचाने का ज़रिया थी।

मामून ने ख़ुद को इमाम का तरफ़दार ज़ाहिर करने के लिए अहकामात जारी कर दिये कि तमाम इस्लामी दुनिया की मस्जिदों में जुमा के ख़ुतबे में इमाम का नाम शामिल किया जाए। यही नहीं बल्कि उसने हुकूमत का क़ौमी रंग सियाह के बजाए सब्ज़ क़रार दे दिया, क्योंकि सियाह रंग बनी अब्बास का क़ौमी निशान था और सब्ज़ रंग बनी फ़ातिमा का।

इस तरह इमाम के नाम और शीआी तहरीक के पैग़ाम की तौसी हुई। जिस हथियार को मामून ने इमाम के ख़िलाफ़ और शीआी तहरीक को बेकार करने के लिए इस्तेमाल करना चाहा था, इमाम ने इसी हथियार को ख़िलाफ़त और हुकूमत के ख़िलाफ़ इस्तेमाल किया और मजबूरी की वजह से जो हालात पैदा हो गये थे इन ही हालात से इमाम ने शीआी तहरीक के मफ़ाद में इस्तेमाल किया।

इमाम रिज़ा[अ०] की अक़लमन्दी अमली ये थी कि एक तरफ़ तो वली अहदी क़ुबूल करके ये ज़ाहिर कर दिया कि ख़िलाफ़त को वह अपना हक़ समझते हैं, और दूसरी तरफ़ बार-बार मुख़्तलिफ़ तरीक़ों से इस बात को ज़ाहिर किया कि मामून और उसकी हुकूमत के मुख़ालिफ़ हैं और वह वली अहदी को मजबूरन क़ुबूल कर रहे हैं। इमाम रिज़ा इसी तरह के हालात से गुज़र रहे थे जिनसे तीसरे ख़लीफ़ा के क़त्ल के बाद हज़रत अली[अ०] गुज़रे थे। हज़रत अली[अ०] ने भी ख़िलाफ़त क़ुबूल कर ली थी ताकि कोई ये न कह सके कि अगर अली[अ०] ख़िलाफ़त को अपना हक़ समझते थे तो उन्होंने ख़िलाफ़ ने क़ुबूल क्यों न की? मगर साथ ही साथ ये भी ज़ाहिर कर दिया कि वह मजबूरन ख़िलाफ़त क़ुबूल कर रहे हैं।

इमाम रिज़ा[अ०] जानते थे कि उनका वली अहद बनना मामून की उम्मीदों के ख़िलाफ़ साबित होगा और उनकी वली अहदी से शीआी तहरीक ख़त्म नहीं होगी क्योंकि शिया वह मोमिन हैं जो इमाम की इस्मत का अक़ीदा रखते हैं और जानते हैं कि इमाम कभी हुकूमत के आल-ए-कार नहीं बनेंगे और वली अहदी को क़ुबूल करने का मक़सद, ख़िलाफ़त के निज़ाम को बातिल क़रार देना है। इमाम रिज़ा[अ०] अच्छी तरह समझ रहे थे कि वह मामून को यहाँ तक हरासाँ कर देंगे कि वह उन्हें शहीद करा दे। इस तरह वली अहदी का क़ुबूल करना हुकूमत और शियों के दरमियान झगड़ा बढ़ाने का सबब हो जायेगा, न कि कम करने का।

इमाम रिज़ा[अ०] ने अपनी हिकमते अमली से मामून की हिकमते अमली को शिकस्त दे दी और वली अहदी को एक ऐसा मिंबर बनाया जहाँ से वह शीआी एहतेजाज को आलमे इस्लाम के गोशे-गोशे तक पहुँचा सकें।

हम इमाम रिज़ा की ग़ैर मामूली हिकमते अमली की कामयाबी को इस रद्दे अमल से समझ सकते हैं कि उनके बाद ममलकते इस्लामी के तूल व अर्ज़ में मुख़्तलिफ़ शिया इन्क़ेलाबी तहरीकें सर उभारने लगीं और हुकूमत इस क़दर हरासाँ हो गयी कि बाद के अइम्मा को हमेशा या तो क़ैद में रखा गया या कड़ी निगरानी में और मुतवक्किल जैसे लोगों ने दजला व फ़ुरात को बेशुमार शियों के ख़ून से रंगीन कर दिया।

जिस तरह इमाम हसन[अ०] की अक़्लमन्दी ने मुनाफ़ेक़त के मकरूह चेहरे से इस्लाम की नक़ली नक़ाब नोच कर फेंक दिया था और मुआविया को मजबूर कर दिया था कि वह यज़ीद की सूरत में अपनी असलियत ज़ाहिर कर दे। इसी तरह इमाम रिज़ा[अ०] ने भी मुनाफ़िक़ हुकूमत के चेहरे से इस्लाम दोस्ती का नक़ाब नोच फेंका था और मामून को मुतवक्किल के रूप में अपना असली चेहरा दिखाने पर मजबूर कर दिया था क्योंकि हक़ और हक़ परस्तों के लिये ''मुआविया'' और ''मामून'' का मरहला हमेशा ''यज़ीद'' और ''मुतवक्किल'' के मरहले से कम ख़तरनाक नहीं होता है।

❑❑❑